समता योगः एक अनुचिंतन

• श्री जशकरण डागा, टोंक

"मंत्रों में परमेष्ठी मंत्र ज्यों, व्रतो में ब्रह्म-चर्य महान।
तारागण में ज्यों चंदा है, पर्वत बड़ा सुमेरा जान॥
नदी में गंगा काष्ठ में चन्दन, ज्यों देवो में इन्द्र महान।
त्यों योगो में 'समता' उत्तम, साक्षी आगम वेद पुराना॥" [१]

अध्यात्म जगत में तीन योग मुख्य हैं -ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग। इन तीनों योगों के सम्यग् समन्वय का नाम ही 'समतायोग' है। यही मोक्ष मार्ग का सर्वोत्तम योग है। बिना इसके मात्र ज्ञान या कर्म या भक्ति योग स्वप्रतिष्ठित महान होकर भी अपूर्ण कहे गए हैं। जैसे हरड़ बहेड़ा व आँवला, तीनों गुणकारी होने पर भी त्रिफला अमृत तो इन तीनों के सम्यग् सम्मिश्रण से ही प्राप्त होता है, वैसे ही आत्मा को परमानन्द रूप अलौकिक अमृत की प्राप्ति व अनुभूति, ज्ञान, दर्शन (भक्ति) व चारित्र (कर्म) के सम्यग् समन्वय पर होती है। इसे ही समता योग कहते हैं। यह समता योग सभी योगों में श्रेष्ठ तथा सभी दर्शनों, सिद्धान्तों व शास्त्रों का सार भूत तत्व है। जिसने इसे प्राप्त कर लिया वह कृत्य-कृत्य हो गया और शाश्वत मुक्ति का स्वामी बन गया है।

अर्थ एवं व्याख्या - समता शब्द में तीन अक्षर हैं जो रत्नत्रय के प्रतीक हैं। यथा-स=सम्यक्तव, म=मति (ज्ञान), ता=त्याग (चारित्र)। अर्थात् जहाँ सम्यग् ज्ञान दर्शन व चारित्र की पावन त्रिवेणी का संगम होता है, वहाँ जीवन में, सच्चे समता योग का सूर्य उदित होता है। समता शब्द सम से बना है। संस्कृत में इसके तीन पर्यायवाची हैं -

(i) साम्य = आत्मा की सहज तटस्थ निर्विकलष दशा ।
(ii) शम = क्रोध, मान, माया व लोभ के शमन से प्राप्त शान्त दशा ।
(iii) श्रम = तप रूप श्रम से कर्म दाय होने पर उपलब्ध आत्मा की विशुद्ध (निर्मल) दशा।

इस प्रकार से संक्षेप में कहा जाय तो 'समता योग' आत्मा का स्वाभाव में अवस्थित, वह सहज दशा है, जब वह परमात्म भावों में या तद्नुरूप विशुद्ध भावों में स्थिर हो, अंतर में रहे शाश्वत सुख शाति के अजस्त्र स्रोत में लीन होता है। यह समता योग बहिरात्मा से अंतर आत्मा, अंतर अत्मा से महात्मा और महात्मा से परमात्मा होने की सर्वश्रेष्ठ दिव्य कला है, जो सभी साधकों के तप, जप, ज्ञान, ध्यान, का चरम लक्ष्य होता है। समता योग को विशेष रूप से समझने हेतु उसके विरोधक ममता को समझना आवश्यक है। 'ममता' का अर्थ है (मूर्च्छा) आसक्ति। जो आत्मा विषमता पैदा करे वह ममता है।

---

१. स्वरचित पद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'ममता' के पाँच पुत्र और अगणित संबंधी है। पाँच पुत्र हैं (i) मिथ्यात्व (ii) अव्रत (iii) कषाय (iv) प्रमाद व (v) अशुभ योग। संबंधी है क्रोध, मान, माया, लोभ, मद, मत्सर, राग, द्वेष, काम, भय, घृणा, अशान्ति, कलह, क्षोभ, तृष्णा, बैर, हिंसा, असत्य अदत्त, अब्रह्म, परिग्रह, निर्दयताा, रति, अरति, अभ्याख्यान, वक्रता, छल, कपट आदि पाप वृत्तियाँ एवं सभी दुर्गुण। 'समता' के भी पाँच पुत्र है और अगणित संबंधी हैं। पाँच पुत्र हैं (i) सम्यक्त्व (ii) विरति (iii) अकजाय (iv) अप्रमत्त व (v) शुभ (या शुद्ध) योग। संबंधी है- शम, संवेग, निर्वेद, आस्व, अनुकम्पा, दया, शान्ति, क्षमा, त्याग, वैराग्य, सत्य, अहिंसा, अचौर्य, शील, अपरिग्रह, सरलता, सहिष्णुता, मृदुता, विनम्रता, अमत्सर्यता, अजुता, लघुता, मुमुक्षता, निस्पृह सेवा, संवर तथा निर्जरा आदि शुभ व शुद्ध प्रवृत्तियाँ एवं सभी सद्गुण।

समता सुख का तो ममता दुख का मूल है। प्रभु से पूछा गया -"किं सुख दुख मूलं ?" उत्तर में प्रभु ने फरमाया -'समता ममताभिधानः।" [२] अर्थात् समता और ममता उनके मूल हैं। वस्तुतः चिंतन करने पर स्पष्ट होता है कि आनंद और सुख का लूख संतोष है, और संतोष का मूल समता है। इसी तरह दुःख व शौक का मूल मोह है, मोह का मूल लोभ और लोभ का भी मूल ममता है। इसी कारण से सुख का मूल समता भी दुःख का मूल ममता बताया गया है।

ममता से हानियाँ -

(१) मोक्ष मार्ग की प्राप्ति न होना - जब तक आत्मा से ममता (तीव्र आसक्ति) न हटे, मोक्ष मार्ग की उपलब्धि नहीं होती। अनंतानुबंधी कषाय तथा दर्शन मोहनीय, ममता की प्रमुख जड़े हैं। जब तक ये विनष्ट न हो, तब तक जीव कितना ही ज्ञान ध्यान, जब तप व त्याग वैराग्य की साधना कर ले, उसे धर्म की प्रथम भूमिका 'सम्यक्तव' ही प्राप्त नहीं होती है।

(२) प्राण विनाशक होना - अनेक प्राणी तीव्र ममतावश आत्मघात कर लेते हैं। कभी आत्मघात की इच्छा न होते हुए भी तीव्र मुचर्छा होने से अकाल मृत्यु हो जाती है। उदाहरणार्थ एक बार एक ईसाई अध्यापक के नाम पर पाँच लाख की लाटरी खुली, जिसकी जानकारी उसके पुत्र को मिली पुत्र समझदार था। उसने विचार किया इसकी सूचना एक दम पिताजी को देना, उनके लिए घातक भी हो सकता है। वह धर्म पादरी के पास पहुँचा। पादरी ने कहा -तुम चिंता मत करो। इनाम किश्तों में लेना है। मैं इसकी सूचना तुम्हारे पिताजी को इस तरह दूंगा कि वे इस खुश खबरी को सुनकर भी आश्चर्य में न पड़े।" पादरी स्कूल जाकर उस अध्यापक से मिला। पादरी ने कहा -तुम्हारे नाम एक लाख की लाटरी खुली है। अध्यापक ने प्रसन्न हो कहा -यह सही है तो पचास हजार मैं तुम्हें दे दूंगा।" पादरी पुनः बोला -लाटरी दो लाख की खुली है।" अध्यापक ने कहा -"तो एक लाख तुम्हें दूँगा।" इस तरह पादरी ने क्रमशः तीन चार व अंत में पाँच लाख का इनाम खुलने का कहा तो अध्यापक ने भी क्रमशः डेढ़, दो व अंत में ढाई लाख पादरी को देने की घोषणा कर दी। पादरी जिसे पाँच रुपये मिलने की भी आशा न थी, यकायक ढाई लाख रुपये मिलने की घोषणा सुन इतना खुश हुआ कि उसका हृदय प्रसन्नता से बढ़े रक्त चाप को बर्दाश्त नहीं कर सका और दूसरों को समझाने वाले पादरी महोदय वहीं ढेर हो गए। इस प्रकार "ममता" अनचाहे में भी प्राण हरण कर लेती है।

---

२. शंकर प्रश्नोत्तरी से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) सर्व दुखो का मूल कारण - प्रभु महावीर ने सर्व दुखो का कारण पारिग्रह (मूर्च्छा) को बताते हुए, उसे मांस के टुकड़े की उपमा दी है।[३] एक बार एक बगुला कसाई की दुकान से एक मांस का टुकड़ा लेकर वृक्ष पर जा बैठा, तो वहाँ कव्वे, चीलें व गिद्द आदि उसके पीछे पड़ गए। बगुला वहाँ से से जल में चला गया तो वहाँ मगर, घड़ियाल आदि पीछे पड़ गए। बगुला परेशान होकर जल के बाहर किनारे पर आ बैठा तो वहाँ भी कुत्ते, सूअर आदि ने आ घेरा। अन्ततः उसने सारे झगड़े की जड़ मांस के टुकड़े को छोड़ दिया, तब ही वह शान्ति और सुख चैन से रह सका।

इस उदाहरण से सुस्पष्ट है कि जब तक धन आदि पर ममता (मूर्च्छा) की पकड़ रहेगी, जीवन में विविध दुःख और अशान्ति बनी रहेगी।

समता योग से लाभ -

(१) समता से ही चारित्र की उपलब्धि - शास्त्रकारों ने फरमाया है -'चास्ति समभावो।'[४] अर्थात् समभाव आने पर ही चारित्र प्राप्त होता है। अभव्य जीव, मुनि का द्रव्यं लिंग धारग कर गौतस स्वामी जैसी क्रिया कर लेता है किन्तु उसमें समता के अभाव से निश्चय से एक भी चारित्र नहीं होता है।

(२) समता से ही सच्ची सामायिक होना - सामायिक का मूल आधार ही समता है, कहा है-

"समता भाव धारण करे, जो देखे निज रूप।
सामायिक तेने कहे, जे, सुख शान्ति स्वरूप॥"

बिना समता, सामायिक के अन्य सभी दोषो को टाल कर विधिपूर्वक की गई सामायकि भी सच्ची सामायिक नहीं हो सकती है। सामायिक की व्याख्या में भी कहा है -'समता सर्वभूतेषु अर्थात् समस्त प्राणियों पर समता हो। सामायिक का स्वरूप बताते हुए ज्ञानी कहते हैं -

"जो समो सव्व भूए सु, तमे थावरे सुय।
तस्स सामाइयं होइ, इह केवलि भासियं॥"[५]

इस प्रकार सुस्पष्ट है कि सामायिक की प्राथमिक शर्त 'समता' है और बिना समता के सच्ची सामायिक नहीं हो सकती है। यह समता योग की आराधना से ही संभव है।

(३) समता सभी व्रतों का आधार है - सभी व्रत, प्रत्याख्यान, यम नियम, संयम की शुद्ध पालना समता भाव में ही संभव है। विसमता आते ही इन सबका अस्तित्व, उसी प्रकार खतरे में पड़ जाता है, जिस प्रकार समुद्र में तूफान आने पर उसमें जहाज में रहे प्राणियों का।

(४) समता से मनुष्य महान होता है - एक बार विद्वद् गोष्ठी में प्रश्न उठा कि महान कौन? उत्तर में एक ने कहा जो सर्वाधिक ज्ञानी हो। दूसरे ने कहा जो सबसे बढ़िया प्रवचन कार हो। तीसरे ने

---

३. सूत्रकृतांग सूत्र

४. पंचास्तिकाय १०७

५. आवश्यक निर्युक्ति, अनुयोगद्वार गा. १२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहा जो सबसे बड़ा त्यागी हो। चौथे ने कहा जो सबसे बड़ा तपस्वी हो। पांचवे ने कहा जिसके सर्वाधिक अनुयायी हो इत्यादि। किन्तु इन उत्तरों से सबकी संतुष्टी नहीं हुई। विद्वद् गोष्ठी में एक गीतार्थ महात्मा भी बैठे थे। उनसे सही उत्तर के लिए निवेदन किया गया। महात्मा ने सबको शान्त कर कहा 'जो राग दोसंहिं समो सपुज्जो।' [६] अर्थात् जो राग द्वेष में सम है -जिसे कोई दस कड़वे अप शब्द कहे; फिर भी विषमता न जाये, और बदले में बीस घूट मीठे अमृत की पिलादे, वही सबमें महान है पूज्य है। महात्मा के उत्तर से सही संतुष्ट हुए। वस्तुतः जो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी 'सम' रहे वह मानव महामानव होता है। प्रभु महावीर ने अपनी अंतिम देशना में फर माया है -

"लाहा लाहे सुहे दुक्खे, जीविए मरणए तहा।
समो निंदा पंससासु, समो माणा व माणंओ॥" [७]

(५) समता से सद्गति - 'जैसी मति वैसे गति के अनुसार जो मृत्यु समय में भी समता योग में रहते हैं, उनकी शुभ लेश्या होने से सद्गति सुनिश्चित होती है। जब कि ममता मूर्च्छा रखने वाले मरकार प्रायः अशुभ लेश्या में होने से तिर्यंच नरक गतियों में जाते हैं।

(६) समता से अजय साधना भी विशेष फलदायक होती है - जिस प्रकार दूध के साथ घृत का योग होने से, उसका सेवन विशेष शक्ति दायक हो जाता है, उसी प्रकार साधना के साथ समता योग होने से वह भी विशेष फल- दायक हो जाती है। सामायिक हो, चाहे पूजा या त्याग तपस्या, समता योग के साथ की गई अजय साधना भी चमत्कार पैदा कर देती है। समता योग से विधि पूर्वक अरिहंत प्रभु को किया गया एक वंदन भी संसार परित्त करने का हेतु बन जाता है। इस संबंध में महान अध्यात्म योगी श्रीमद् देवचन्द्र जी ने प्रभु संभवनाथ की स्तुति करते हुए कहा है -

"एक बार प्रभु वंदना रे, आगम रीते थाय।
कारण सत्य कार्य नारे, सिद्धि प्रतीति थाय॥" [८] *आगम कार भी कहते हैं -*
"इक्कोवि नमुक्कारो, जिणवर व सहस्स वद्धमानस्स संसार सागराओ, तारे इ नरंवाष्णारिं वा।" [९]

(७) बिना समता मुक्ति नहीं - प्रभु ने फरमाया है कि 'समयाए बिण मुक्खो, न हु हुओ कह वि न हु होई।' [१०] अर्थात् बिना समता योग आराधना कभी किसी आत्मा को मुक्ति नहीं हुई और न होगी।

(८) आत्मा से परमात्मा हो जाता है - आत्मा से महात्मा और महात्मा से परमात्मा पद प्राप्त करने का मूल मार्ग समता योग साधना हैं समता से अवगुणों का विनाश और सद्गुणों का विकास होता है। फलतः शनैः-शनैः आत्मा का परमात्मा स्वरूप प्रगट हो जाता है। एक उर्दू कवि ने भी कहा है -

---

६. दशवै. ९/३/९१

७. उत्तरा अ १९ गा. ९०१।

८. देवचंद्रजी चौबीसी सी

९. प्रकीर्ण गाथाओं से।

१०. सामायिक प्रवचन पृ. ७८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"जब तेरी बद फेलियो का खातमा हो जायगा।
तब तेरी यह आत्मा ही परमात्मा हो जाएगा।"

महान विद्वान आचार्य हरिभद्र सूरि ने भी कहा है -

"संयबरो वा, आसक रोवा, बुद्धो वा तहे व अन्नोवा।
समभाव भावि अप्पा, लहह मोबरवं न संदेहो॥"

अर्थात् चाहे श्वेताम्बर हो चाहे दिगम्बर चाहे बौद्ध हो या अन्य समता योग से भावित आत्मा ही मोक्ष प्राप्त करता है यह निस्संदेह सत्य है।

(९) समता योग में सच्चे सुख की उपलब्धि - समता धारण से तत्क्षण सच्चे सुख की उपलब्धि होती है। म. कबीर ने कहा है -

"जीवित समझो जीवित बूझो, जीवित मुक्ति वासा।
मुए मुक्ति गुरु लोभी बतावे, झूंठा दे विश्वासा॥" [११]

समता साधना से इसी भव में और वह भी बाद में नहीं तत्काल साधना के उसी क्षण मुक्ति के सुख की साधक अनुभूति कर लेता है। इसलिए यह समता योग धर्म उधार धर्म नहीं नगद धर्म है। जब भी समता में आओ तभी सुख पाओ। समता में अद्भुत शक्ति है। सामान्यतः सुखी वही होते हैं, जो पुण्य शाली होते हैं। किन्तु पुण्य विहीन दुखी आत्माएं भी, समता धर्म को अपना कर, पुण्य शलियों से भी अधिक सुखी हो जाती है। उसके सुख के आगे चक्रवर्ती और इन्द्र के सुख भी फीके पड़ जाते हैं। कहा है -

"तीन टूक को पिन के, रोठी किन भाजी बिन जूण।
जो सुख हो समभाव का, इन्द्र बिचारा कूण॥"

समता योग से प्राप्त् सुख अनुत्तर होता है। उसके आगे संसार के अन्य सारे पौद्गलिक सुख तुच्छ है। कहा है -

"तन सुख, मन सुख, मान सुख, भले अर्थ सुख होय।
पर समता सुख परम सुख, ऐसा सुख ना कोय॥"

समता योग साधना का महत्व -

"समता से सुख स्वर्ग मोक्ष का, जो रमता वह पाता है।
समता की ज्योति पाकर के, पापी भी तिर जाता है॥
समता अनुपम देन प्रभु की, यह चिन्तामणि मोती है।
इस भूतल पर स्वर्ग देख लो, जहाँ समता की ज्योति है॥" [१२]

---

११ म. कबीर के पदों से।

१२. स्वरचित मुक्तक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्तुतः संसार में समता से बढ़कर अन्य कुछ नहीं है।

समता योग साधना के व्यवहारिक उपाय - हम कथनी तो करे, पर तद्नुकूल करणी न हो, ज्ञान तो हो, पर आचरण न हो, तो ऐसी कथनी और ज्ञान का क्या महत्व होगा? हम विद्वान होकर समता योग का तलस्पर्शी विवेचन तो करे, परंतु हमारे जीवन में समता न आवे तो वह विद्वता क्या हमारे लिए भारवाही गर्दभ के भार जैसी न होगी। कहा है -

"कुरान बाइबिल सब पढ़े चारों वेद पुरान।
जो समता आई नहीं तो सब फोकट ज्ञान॥"

अतएव हमारे जीरन में समता कैसे आवे, हम समता योग के सच्चे आराधक और साधक कैसे होवें, इस पर हमें गंभीरता से चिंतन करना है। यहाँ इसी हेतु कुछ महत्वपूर्ण व्यवहारिक उपाय जिनसे जीवन में समता योग की उपलब्धि हो सकती है। प्रस्तुत किए जा रहे हैं। ये ऐसे अनुभूत उपाय है, जिनसे स्वयं लेखक लाभान्वित हुआ है, और मुझे पूर्ण विश्वास है, कि जो भी मुमुक्ष आत्मार्थी इन पर विशेष चिंतन मनन कर जीवन में अपनावेंगे, वे समत्व भाव की साधना में निश्चित रूप से सफल होंगे।

(१) गुण ग्रहण की रुचि - संसार में कोई जीव या अजीव वस्तु, ऐसी नहीं, कि जिसमें कोई गुण न हो। हम जिसके भी सम्पर्क मे आवें, उससे गुण ग्रहण करने का सतत प्रयास रखें। जैसे हंस, नीर क्षीर में से, नीर को छोड़ क्षीर ग्रहण कर लेता है, वैसे ही हम भी नीर क्षीर विवेक की दृष्टि रख, दोषों को छोड़ते हुए, जो भी गुण मिले उसे ग्रहण करने की वृत्ति जाग्रत करें। गुण दर्शन और गुण ग्रहण से सहज ही परस्पर प्रेम और सौहार्द्र का वातावरण बनता है, जो विषमता को मिटा समता की अभिवृद्धि करता है।

(२) स्वदोष दर्शन - हमारे में समता न आने का एक प्रमुख कारण है, दूसरों से वैर विरोध व वैमनस्य रखना। हमें दूसरों के सूक्ष्म दोष भी बहुत बड़े नजर आते हैं, और अखरते हैं। जब कि स्वयं में रहे बड़े-बड़े दोष भी न तो नजर आते हैं, और न वे बुरे लगते हैं। एक कवि ने कहा है -

"गैर की आँख का, तिनका भी नजर आता है।
अपनी आँख का, नजर आता नहीं शहतीर भी॥"

पर निंदा से बचने के लिए स्वामी चिदानंद जी ने बड़ा सुंदर कथन इस प्रकार कहा है -'अंधकार को अपशब्द कहने की अपेक्षा, स्वयं पहिले अपने हाथ में दीपक उठाले, तो सर्वत्र प्रकाश होगा और अंधकार स्वयं कूच कर जायेगा।' हम स्वयं अपने दोषों को, विवेक के आलोक में पुनः-पुनः देखने का अभ्यास करें। जैसे -

"कितनी त्याग सका पर निंदा, कितना अपना अंतर देखा।
कितना अपने पुण्य पाप का, रख पाया हूँ अब तक लेखा॥
लोभ मोह मद कितना छोड़ा, नाता कम क्रोध से तोड़ा।
विषय वासनाओं से हटकर, कितना निज से निज को जोड़ा॥"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस संबंध में ही महाकवि, भक्त सूरदार जी का यह पद भी पुनः-पुनः चिंतनीय है -"मो सम कौन कुटिल खल कामी।" इस प्रकार , स्वदोष दर्शन से दूसरे के दोष व छिद्र देखने की कुत्सित वृत्ति का संक्रमण हो जायेगा वही हमारे लिए सदवृत्ति बनकर उपकारक हो जायेगी। इससे दूसरों का तिरस्कार करने की आदत बदल जायेगी। जिससे परस्पर ईर्ष्या, क्रोध, द्वेष, बैर, की भावना खतम होकर महज प्रेम व समता का वातावरण निर्मित हो सकेगा। कुछ विचारक स्वदोष दर्शकपदों को हीन भावना उत्पन्न करने वाले कह कर, उन्हें हेय बताते हैं। किन्तु यह उचित नहीं है। वस्तुतः ऐसे पदों के बोलने से हमारे अंतर में रहे अहंकार और ममकार पर चोट पड़ती है, जिससे ऐसे पद अच्छे नहीं लगते। ऐसे पदों के बोलने से कषायें घटती है और नम्रता सरलता लघुता व समता जीवन में विकसित होती है।

(३) सर्व भूत आत्मीय भावना - सब प्राणियों में अपने समान आत्मा है, ऐसा निश्चय कर सभी प्राणियों के प्रति मैत्री भावना का विकास करें। जो जीव अजीव द्रव्यों के स्वरूप को जानता है वह विद्वान है, किन्तु जो स्वरूप जानने के साथ अन्य सभी जीवों के साथ आत्मीय भाव रखता है वह पंडित है। कहा भी है -

"मातृवत परदारेसु पर द्रव्येसु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्व भूतेषु, य पश्यति स पंडितः॥" [१३]

हम मात्र विद्वान ही न बने किन्तु समता योग साधना के उपासक हो सच्चे पंडित भी बने। समता भावना का प्रेरक एक पद प्रस्तुत है -

"कोई जीव नहीं जग मांहि, जो रहा सगा नहीं तेरा।
फिर क्यों करे किसी से बैर, दो दिन का यहाँ बसेरा।
दो दिन का यहाँ बसेरा, सब ना -समझी का फेरा।
समता दीप जला हो जाय, जीवन का दूर अंधेरा॥" [१४]

(४) सरल सादा व संयमी जीवन - सादा जीवन उच्चविचार उक्ति के अनुसार समता साधकों को अपना जीवन बाहर से सादगी व संयमित और अंतर में सरलता युक्त बनाना आवश्यक है। जिनका जीवन सादा, सरल व संयमित नहीं वे समता दर्शन के पात्र नहीं हो सकते। तन, मन, वाणी व धन चारों पर नियंत्रण आवश्यक है। तन के असंयम से व्याधि मन के संयम से आधि, धन के असंयम से उपाधि और वाणी के असंयम से विवादी स्थितियाँ बन जाती है। ये सब असमाधि और विषमता पैदा करती है। इसके विपरीत सरल सादी संयमी दशा जीवन में समाधि लाती है।

(५) सहिष्णुता और मधुर व्यवहार - सज्जन दुर्जन शत्रु मित्र सभी के प्रति हमारा व्यवहार उदार एवं सहृदयता पूर्ण होना चाहिए। 'सव्य जग तू समयाणु पेही' [१५] के अनुसार सर्व जगत को 'वसुदैव कुटुम्बकम्' वत् समझकर विरोधियों के प्रति भी उदारता व प्रेम का व्यवहार करे। 'वचने का दारिद्रता?' के

१३. चाणक्य नीति १२/१३

१४. स्वरचित मैत्री भावना पद से।

१५. सूत्र कृतांग २/३/९३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुसार हमारी भाषा हल्की या दूसरों को अखरने की भी न होना मधुर एवं संयत हो। जैन धर्म गुण पूजक है, व्यक्ति पूजक नहीं। अतएव व्यक्ति पूजक होकर परस्पर कटुता न लावें। विभिन्न परम्परा वालों को भी परस्पर मिलने पर समुचित आदर दिया जावे। यदि लम्बी मुहपत्ति वालों के धर्म स्थान में चौड़ी मुहपत्ति वाले आते हैं या बिना मुहपत्ती बाधने वाले आते हैं तो उनकी उपेक्षा न की जावे। म. महावीर के सब अनुयायी होकर यदि एक साथ एक स्थान पर प्रेम से बैठ भी न सके तो यह कैसी समता होगी? इतिहास साक्षी है कि म. पारस नाथ व म. महावीर की आचार परम्परा में भेद होते हुए भी दोनों के ही साधक जब भी मिलते तो एक दूसरे के साथ योग्य बहुमान देते व प्रेमपूर्वक आदर सत्कार करते थे। समता दर्शन का साधक कभी अपने उपास्य के प्रति भी कदाग्रही नहीं होता। उसका किसी के प्रति कोई पक्षपात नहीं होता है। वह जानता है कि पक्षपात से रागद्वेष बढ़ता है, और रागद्वेष 'रागोय दोसो वियकम्म बींय' [१६] के अनुसार कार्य बंध के बीज हैं। जो वीतराग हो गये वह चाहे महावीर हो या ब्रह्मा, विष्णु या अन्य कोई, वे सब उसके उपास्य देव हैं। उसकी मान्यता होती है

"भव बीजांकुर जनना रागा द्या, क्षय मुपा गता यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरौ, जिनो वा नमस्तस्मैः॥" [१७]

(६) विवेक जाग्रत रखें - अंधकार नहीं आता है जहाँ सूर्य का प्रकाश न हो। विषमता रूपी अंधकार जीवन में न आवे इस हेतु सदैव विवेक रूपी सूर्य को लुप्त न होने दें। विवेक के आलोक में स्वयं से स्वयं की पहिचान करें, जिससे भेद ज्ञान प्राप्त हो सके। भदे ज्ञान प्राप्त होने पर ही सच्ची समता की अनुभूति होती है। उस अनुभूति का रस कैसा अनुपम और विलक्षण होता है, उसका एक नमूना तत्वज्ञ पं. बनारसी दास जी के शब्दों में प्रस्तुत है -

'भेद विज्ञान जग्यो जिनके घट, चित्त भयो जिम शीतल चन्दन।
केलि करे शिव मार्ग में, जग मांहि जिनेश्वर के लघुनन्दन॥
सत्य स्वाभाव सदा जिनका, प्रगट्यो अवधात मिथ्यात्व निकंदन।
शांत दशा जिनकी पहिचान, करे जोरि बनारसी वंदन॥"

भेद विज्ञान जो समता योग की जननी है कितना महान है जिसे पाकर जीव जिनेश्वर का लघुनंदन हो जाता है।

जाग्रत विवेकवान दूसरे गिरते हुओं को भी बचा लेता है। एक बार एक सेठ को मरणांतिक भयंकर वेदना हुई। चिकित्सकों ने आश्चर्य किया कि २२० डिगरी ज्वर होते हुए भी सेठ जिंदा कैसे है? तभी एक महात्मा को सेठ को मंगलिक देने को जिससे शान्ति मिले, बुलाया गया। महात्मा ज्ञानी थे। उन्होंने ताड़ लिया कि सेठ की धन में मूर्च्छा होने से, उसके प्राण धन में अटक रहे हैं। महात्मा ने सेठ को मंगालिक सुना कर एक सुई दी, और कहा "आप इसे सम्हालकर रखे। परलोक जावें तो साथ लेते जावें। मैं परलोक में आऊंगा तब आप से ले लूंगा।" सेठ ने विचार कर कहा "महात्मन मेरा शरीर ही

---

१६. उत्तरा. ३२/७

१७. आचार्य हरिभद्र सूरिकृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साथ न जावेगा तो इसे कैसे साथ जे जाऊ?" महात्मा ने कहा "जब आप सुई साथ नहीं ले जा सकते तो फिर सारे धन को साथ ले जाने की ममता से क्यों प्राण अटका कर तकलीफ पा रहे हैं?" बस सेठ का विवेक जगा और महात्मा से संधारा ग्रहण कर लिया । धन पर मूर्च्छा हट जाने से, तत्काल सेठ के प्राण निकल गए और समाधि मरण प्राप्त कर लिया।

(७) ममता विहीन अनासक्त वृत्ति - समता उपलब्धि हेतु जीवन को निर्मम और अनासक्त बनाना भी आवश्यक है। ममता सर्व दुखों और विषमताओं की जननी है। ममता की पाश, पाँच ककार से निर्मित है वे हैं कंचन, कामिनी, कुटुम्ब, काया व कीर्ति। प्राणी इस पाश से बंधकर सदा व्याकुल और चिंताओं से ग्रसित रहता है। इस पाश से मुक्ति होने के लिए ज्ञानियों ने बारह भावनाओं का ब्रह्मास्त्र बताया है। ये बारह भवनाएं इस प्रकार हैं -(१) अनित्य (२) अशरण (३) संसार (४) एकत्व (५) अत्यत्व (६) अशुचि (७)आश्रव (८) संवर (९) निर्जरा (१०) लोक (११) दुर्लभ बोधि व (१२) धर्म भावना। [१८]

ये बारह भावनाएं वैराग्य वर्धक होने से ममता पाश को बहुत शीघ्र काट देती है, जिससे इनका नित्य पुनः-पुनः चिंतन करना चाहिए।

(८) शुभ ध्यान से प्रमोदित रहे - विषमता न पनपे इस हेतु सदा एक सूत्र याद रखो 'कर्म करते रहो, मुस्कराते रहो।' चित्त को सदैव शुभ में धर्म ध्यान लगाए रखो और उदास न रहो। आर्त्त व रौद्रध्यान समता के लिए जहर है, जिससे बचते रहो। अशुभ ध्यान प्रायः दुख या प्रतिकूलता या अभावग्रस्त स्थिति में होता है, जिससे बचने के लिए निम्न चिंतन करें -

(i) जो भी दुख या प्रतिकूलता या अभावग्रस्तता है, वह स्व कर्म जनित है, पूर्व कर्मों का ऋण है, जिसे चुकाना ही है।

(ii) अपने से अधिक दुखियों को देखो-इससे बड़ी राहत और संतोष मिलेगा।

(iii) जो अशुभ कर्म बांधे हैं, उन्हें भुगतने ही पड़ेंगे। समभावों से वे क्षय हो जाते हैं, जब कि विषम भावों से और नए बंध जाते हैं। ज्ञानी कहते हैं -

"जो जो पुद्गल स्पर्शना तेते, निश्चय होय।
ममता समता भाव से, कर्म बंधक्षय होय॥"

(iv) जब शुभ नहीं रहा तो यह अशुभ भी रहने वाला नहीं है। रात्रि के घोर अंधकार के बाद भी दिन आता ही है, अतः अशुभ में अधीर न होवें।

(९) असद् व्यवहार से दूर रहें - सुख शान्ति आत्मा की सहज स्थिति होने से वह बड़ी सस्ती और सुलभ है, और दुःख अशांन्ति के साथ अनेक झंझटे व परेशानियाँ जुड़ी होने से वह बड़ी महंगी पड़ती है। किन्तु फिर भी हम व्यर्थ में दूसरे के प्रति ऐसा व्यवहार जो स्वयं हमें पसंद नहीं करके परस्पर कटुता, क्षोभ व अशांति पैदा कर लेते हैं। अतएव नीति के इस सूत्र को सदा ध्यान में रखें -"आत्मतः प्रतिकूलानि, परेबां न समा चरेत।" जो व्यवहार अपनी आत्मा को अनुकूल नहीं, वो व्यवहार असद् होने से दूसरों के प्रति भी न करें।

---

१८. प्रवचन सारोद्धार, ६७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१०) स्वाध्याय सत्संग का अलम्बन रखें - ज्ञानियों ने संसार को विषवृक्ष कहते हुए उसके दो अमृत फल बताए हैं। वे हैं स्वाध्याय और सत्संग। इस विषम काल में समता साधकों के लिए ये दो बड़े आलम्बन है। जो स्वाध्याय और सत्संग में मन को रमा देता है, उसे फिर ममता अपने मोह जाल में नहीं बांध पाती है। कारण उसे अंतर में रहे परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है फिर उसे संसार के सभी नजारे फीके लगने लगते हैं। कविवर रहीम खान ने इसी संबंध में कहा है -

"प्रीतम छवि नैना बसी, पर छबि कहा सुहाय।
रहिमन भरी सराय लखि पथिक आप फिर जाय॥"

(११) चार उत्तम भावनाओं की पालना - समभाव में अवस्थित रहने हेतु निम्न चार भावनाओं की पालना बहुत उपयोगी है। ये उत्तम भावनाएं इस प्रकार हैं।

"सत्वेषु मैत्री, गुणीषुप्रमोदं, क्विष्टेषु जीवेषुकृपा परत्वम्।
माध्यस्थ भावों विपरीत वृत्तौ, सदा ममात्मा विद्‌धातु दैवः॥" [१९]

संसार के समस्त जीवों के प्रति सब सुखी हो, मबका कल्याण हो और दुःख की मूल ऐसी पाप वृत्ति को छोड़ें ऐसी हित भावना रखना प्रथम् मैत्री भावना है। जो अपने से अधिक गुणी हैं, उनका यथोचित सत्कार सम्मान करना, उनके दर्शन पाकर जैसे सूर्यमुखी कलल सूर्य देख खिल उठता है, वैसे प्रमोदित हो जाना दूसरी प्रमोद भावना है। जो दुःखी और पीड़ित हैं, वे सुखी और स्वस्थ होवें व उनके प्रति सहानुभूति रखना, तीसरी करूणा भावना है। जो दुर्जन हैं, अपात्र हैं, ऐसे जीवों के प्रति भी अवैर विरोध, तटस्थ वृत्ति रखना चौथी माध्यम भावना है। ये चार उत्तम भावनाएँ अनंत सुख का खजाना है। किन्तु महान आश्चर्य है, कि हम इनसे न जुड़कर अनंत दुःख का खजाना, क्रोध, मान, माया, लाभ से जुड़े हुए हैं। तत्त्ववेत्ता श्रीमद् राजचंद्रजी ने इस संदर्भ में जो कहा है वह बडा मननीय है -

"अनंत सुख नाम दुःख, त्यां रही न मित्रता।
अनंत दुःख नाम सुख, प्रेम त्यां विचित्रता॥
उघाड़ न्याय नेत्र ने निहाल रे निहाल तु।
निवृत्ति शीघ्र मेव धारी, ते प्रवृत्ति बाल तू॥"

आगमकार भी कहते हैं -'खल मेलू सोमवा, बहुकाल दुसवा' [२०] जो विजय कायिक सुख देकर बहुत काल दुखदे वो छोड़ने योग्य है।

(१२) समता का अनंत स्रोत उत्तम क्षमा धारण करें - कटु वचन व मरणांतिक कष्ट देने पर भी अनिष्ट कर्त्ता को मात्र निमित्त मानकर उस पर तनिक क्रोध या द्वेष भी न आवे, यह उत्तम क्षमा है। यह जीवन में कैसे आवे, इस हेतु यहाँ तीन आदर्श उदाहरण प्रस्तुत है -

---

१९. कर्त्तव्य कौमुदी पृ. २ श्लोक ३५-५५ तथा तत्वार्थ सूत्र ७/६

२०. दशवै सूत्र।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(i) मुनि क्षमा सागर जी - पू.आ.श्री श्रीलालजी म.सा. के एक शिष्य से एकबार एक पात्रा टूट गया। टूटेपात्र को जोड़ने हेतु मुनि चौथमल जी म. ने अपने पास रख लिया। आचार्य प्रवर ने यह टूटा पात्रा चौथमल जी म.सा. के पास देख, उन्हें खूब उपालम्भ दिया। और कहा तुमने लापरवाही से यह पात्र तोड़ दिया। पात्रे बड़े आरंभ से बानते हैं और प्रसुक पात्रे सर्वत्र सुएम भी नहीं होते। मुनि चौथंमल जी सब उपालम्भ सुनकर भी शान्त रहे, और क्षमता मांगते रहे। तभी जिस मुनि से पात्रा टूटा था, वे गोचरी लेकर लौटे। जब आचार्य श्री को मुनि चौथमल जी को उपालम्भ देते सुना, तो वे हाथ जोड़कर बोले पात्रा तो मुझ से टूटा है, उपालम्भ चौथमल जी म.को क्यों दिया जा रहा है? आचार्य प्रवर ने तब मुनि चौथमल जी से शान्त रहकर क्षमा मांगने का कारण पूछा तो वे बोले गुरुदेव, मैं शान्त न रहता तो आप से अनमोल शिक्षाएं कहाँ सुन पाता? आचार्य प्रवर ने तब उनका नाम मुनि क्षमासागर रख दिया।

(ii) आचार्य भिक्खु - एक बार आचार्य भिक्खुसे चर्चा करते एक अन्य परंपरा के युवक ने क्रोधित हो उनके मस्तक पर ढोला मार दिया। इस पर वहाँ बैठे आचार्य के भक्तगण उत्तेजित हो युवक को मारने को तत्पर हो गए। किन्तु आचार्य देव ने सबको शान्त करते हुए स्वयं बिना उत्तेजित हुए बड़ी मधुरता से कहा -कोई नाराज न होवें। जब दो पैसे की मटकी भी बजाकर जांच कर लेते हैं, तो इस युवक बंधु को भी गुरु बनाना होगा, जिसके लिए परीक्षा ले रहा है। आचार्य के इन शब्दों ने जादू जैसा असर किया। जिस युवक ने आचार्य पर हाथ उठाया, वही उनके चरणों में गिरकर शिष्य बन गया।

(iii) एक बार एक संत ने कुछ भक्तों को हाथों में लाठियाँ, तलवारें लेकर जाते देखा। पूछने पर बताया गया कि दूसरे गाँव के कुछ लोगों ने उनकी मूर्ति तोड़दी है, जिससे वे भी उनका मंदिर तोड़ने जा रहे हैं। संत ने कहा -भक्तों को कोध न कर शान्ति से काम लेना चाहिए। भक्तों ने कहा यह हमारा सात्विक क्रोध है। संत बोले यह तो शैतान की भाषा बोल रहे हो। क्रोध कभी सात्विक नहीं होता। भक्तों ने पूछा शैतान की भाषा का क्या मतलब? कृपाकर समझावें। संत ने उन्हें प्रेम से बिठाया और कहा ध्यान से सुनो शैतान की भाषा समझाता हूँ।

एक बार एक महात्मा नौका में जा रहे थे। साथ में कुछ लोग उनको छेड़ते जा रहे थे। महात्मा ने उन पर कोई ध्यान नहीं दिया। सायंकाल होने से महात्मा ध्यानस्थ हो प्रार्थना में बैठ गए। तब उन लोगों ने अच्छा मौका समझ महात्मा पर कंकर, जूते, आदि मारने लगे। तभी आकाश वाणी हुई -'महात्मन्, तुम कहो तो मैं नांव उलट दूं।' यह सुनते ही शैतानी करने वाले सब महात्मा से क्षमा मांगने लगे और बचाने की गुहार करने लगे। महात्मा ने ध्यान खोला और आकाश की तरफ मुंह कर बोले- प्यारे! यह कैसी शैतानी की भाषा बोल रहे हो? यदि उलटना ही है, तो क्यों न इनकी बुद्धि को उलट दो। तभी पुनः आकाश वाणी हुई -महात्मा, आपने ठीक पहिचाना, जो आपने सुनी वह शैतान की भाषा ही थी। आप धन्य हैं, जो आप को सताने वालों का भी भला चाहते हैं।

शैतान की भाषा, और महात्मा की अद्भुत क्षमा का यह उदाहरण सुनकर, सभी भक्तगण, जो मंदिर तोड़ने जा रहे थे, शान्त हो गए और वापिस अपने गाँव को लौट गए। इस प्रकार क्षमा के उदाहरण मात्र से एक बड़ा संघर्ष टलकर झगड़ा शान्त हो गया। वस्तुतः क्षमा समता का अनन्य स्त्रोत है, जिसे क्षमता साधकों को, जीवन में अपनाना बहुत आवश्यक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपसंहार - अंत में निवेदन करना चाहुँगा कि हम आकृति से तो मानव बन गए। पुण्योदय से अनुकूल साधन सामग्री भी पर्याप्त मिली है। किन्तु प्रकृति से मानव बने या नहीं? यदि मानवता न आई तो फिर पशु में वह हमारे में क्या अंतर रहा? गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है। मनुष्यता का कुल गुण व आधार समता है। यदि समता जीवन में आ गई तो समझो जीवन सार्थक हो गया, धन्य हो गया। सभता योग्य शब्द को उलटा कर पढ़े तो तामस गयो होता है? जिसका अर्थ है -क्रोध, विषमता में गयो समता प्राप्त करने के लिए तामस को छोड़ना ही होगा। इस हेतु हमें स्वशासित हो समता के पोलक सद् गुण शान्ति संतोष, सहिष्णुता, क्षमा आदि को अपनाना ही होगा। हमारा धर्म और कर्म आचार और विचार सभी समता योग साधनासे समता रूप हो, इस भावना का प्रेरक एक पद कह कर विषय पूर्ण करता हूँ -

धर्म है समता हमारा कर्म समता मय हमारा।
साम्य योगी बन हृदय से स्रोत समता का बहावे।
भावभीनी वंदना, महावीर चरणों में चढ़ावें।
शुद्ध ज्योर्तिमय निरामय, राय अपने आप पावें॥

• ***डागा सदन, संघपुरा, टोंक (राज.)***

ज्ञानी पुरूष अपने मन को तथा अपनी इन्द्रियों को अपने नियंत्रण में रखते हैं। अपने मन, वचन तथा काय के अहिष्ट व्यापारों को रोककर अपनी आत्मा को उज्जवल बनाते हैं। वे अपने सत्संकल्प तथा अपने लक्ष्य से कदापि विचलित नहीं होते। किसी भी प्रकार का उपसर्ग और परीषट क्यों न आए, वे अपने विचारों का तथा पथ का परित्याग नहीं करते। उनका सम्यग्ज्ञान ही उनके उत्थान का कारण बनता हैं। इसी कारण संसार के सभी शास्त्र ज्ञान की महिमा का वर्णन करते हैं।

• ***युवाचार्य श्री मधुकर मुनि-***

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org